हमारी राय आपकी राय

सूक्ति

"महत्वपूर्ण यह है कि आप प्यार करें, बजाय यह उम्मीद पालने के कि लोग आपसे प्यार करेंगे।"

सामरसेट मॉम

विवेक की विजय

मौलाना वस्तानवी का दारुल उलूम देवबंद में बने रहना इस संस्थान की परंपरा और प्रतिष्ठा के लिए अच्छा है और यह व्यापक समाज के हित में भी है।

दारुल उलूम, देवबंद में मौलाना गुलाम मोहम्मद वस्तानवी के उपकुलपति बने रहने का फैसला स्वागत योग्य है। अब हमें उम्मीद रखनी चाहिए कि उनकी नियुक्ति से जुड़े विवाद थम जाएंगे और दारुल उलूम अपनी गौरवशाली परंपरा बनाए रखते हुए भविष्य की ओर कदम बढ़ा पाएगा। वस्तानवी को अगर पद छोड़ना पड़ता तो इसका बुरा असर न सिर्फ देवबंद के दारुल उलूम की प्रतिष्ठा पर पड़ता बल्कि उन मुस्लिम नौजवानों के लिए भी यह बुरा होता जो तरक्की के नए रास्तों की ओर उम्मीद से देख रहे हैं। दरअसल जिस बात पर विवाद हुआ उसका दारुल उलूम या वस्तानवी की भविष्य की योजनाओं से कोई लेना-देना नहीं है। वस्तानवी दारुल उलूम में परंपरागत धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ आधुनिक विज्ञान, इंजीनियरी और चिकित्सा जैसे विषय भी जोड़ना चाहते हैं, इस वजह से दारुल उलूम के ज्यादातर शिक्षक और छात्र और साथ ही व्यापक मुस्लिम समुदाय भी उनके समर्थन में था। वस्तानवी ने गुजरात में मुसलमानों की स्थिति को लेकर जो टिप्पणी की, उससे उनके विरोधियों को मौका मिल गया। शायद वस्तानवी का आशय यही था कि गुजरात के दंगे सचमुच दुखद थे, लेकिन मुस्लिम समुदाय को अब पुरानी बातों को छोड़कर आगे बढ़ जाना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा था कि अब गुजरात में मुस्लिमों की हालत बेहतर है और इस बयान को नरेन्द्र मोदी सरकार के समर्थन की तरह देखा गया। इसके विरोध में वस्तानवी को हटाने की मांग होने लगी। इस बयान को लेकर विवाद हो सकता है, लेकिन उनके जाने से भारतीय समाज में भी बुरा संदेश जाता कि दारुल उलूम पर आखिरकार कट्टर परंपरावादियों का कब्जा हो गया। यह दारुल उलूम की परंपरा के भी खिलाफ होता। यह शायद इस उपमहाद्वीप की सबसे प्रतिष्ठित मुस्लिम धार्मिक संस्था है, जिसका सम्मान समूचे विश्व में है।

दारुल उलूम काफी परंपरावादी धार्मिक विश्वासों की संस्था है, लेकिन उसने परंपरा को कट्टरवाद से या संकीर्णता से नहीं जोड़ा। 1957 की क्रांति से लेकर आजादी के आंदोलन में दारुल उलूम की महत्वपूर्ण भूमिका रही और वह हिंदू-मुस्लिम एकता की हमेशा पक्षधर रही है। मोहम्मद अली जिन्ना के द्विराष्ट्रवादी सिद्धांत और भारत विभाजन का दारुल उलूम ने विरोध किया और यह बताया कि मजहब, वतन का आधार नहीं हो सकता। आतंकवाद को भी दारुल उलूम ने हमेशा इस्लाम विरोधी बताया। इसलिए अगर वस्तानवी को जाना पड़ता तो इसकी आंच दारुल उलूम की परंपरा पर आती, जो धर्म की विवेकसम्मत और मानवीय व्याख्या पर जोर देती है। वस्तानवी का अब तक का काम यह बताता है कि मुस्लिम नौजवानों को आधुनिक शिक्षा देने के लिए उन्होंने कई संस्थान खोले हैं, जो सफलतापूर्वक चल रहे हैं। अगर यही काम वे दारुल उलूम में कर पाते हैं, तो इससे मुस्लिम नौजवानों के लिए आधुनिक शिक्षा का दायरा बहुत ज्यादा बढ़ाया जा सकेगा। मुस्लिम नौजवानों का एक छोटा-सा हिस्सा कट्टरवादी और संकीर्ण विचारों की गिरफ्त में है, लेकिन बहुसंख्यक नौजवान तो जमाने के साथ कदम बढ़ाना चाहते हैं, जैसा कि इन दिनों अरब देशों के जनविद्रोह में दिखाई दे रहा है। मुस्लिम नौजवानों की इन उम्मीदों को पूरा करने के लिए अगर वस्तानवी ठोस पहल कर पाते हैं, तो यह उन नौजवानों के लिए और समूचे देश के लिए अच्छा होगा।

विदेशी अखबारों से

अरब की आग

अरब में एक और सत्ता धराशायी होने के कगार पर है। लीबिया उन दो अरब देशों, ट्यूनीशिया और मिस्र के बीच स्थित है, जहां की जनशक्ति ने अपने अलोकप्रिय तानाशाहों को सत्ता छोड़ने को बाध्य कर दिया। राष्ट्रपति बेन अली ने 23 वर्षों तक ट्यूनीशिया पर राज किया था, जबकि 30 वर्षों के शासन के बाद 11 फरवरी को हुस्नी मुबारक को मिस्र की गद्दी छोड़नी पड़ी थी, लेकिन ये दोनों निरंकुश शासक कर्नल गद्दाफी के सत्ताकाल के रिकॉर्ड से फिर भी पीछे ही हैं, जो वर्ष 1969 से ही लीबिया पर काबिज हैं। बतौर गैर-राजशाही शासक गद्दाफी के नाम करीब 42 वर्षों तक हुकूमत करने का विश्व रिकॉर्ड दर्ज है। जब तक आप यह संपादकीय पढ़ रहे होंगे, तब तक उनके इस रिकॉर्ड की हद शायद तय हो चुकी होगी, क्योंकि खबरें संकेत दे रही हैं कि लीबिया सरकार का अनेक शहरों और सैन्य अड्डों पर नियंत्रण खत्म हो चुका है।

द चाइना पोस्ट, ताईवान

जानवर से बदतर जिंदगी

जब आपको पता चलेगा कि जीन डॉसन किस तरह मरीं, तो आप शायद यकीन नहीं कर पाएंगे कि आप एक ऐसे देश के नागरिक हैं, जिसे दुनिया के सबसे सभ्य देशों में से एक गिना जाता है। डॉसन की बेटी जूली जोन्स ने यह खुलासा किया है कि किस तरह उनकी मां ने हॉस्पिटल में अपने आखिरी दिन गुजारे। डॉसन गंदी चादर में लिपटी हुई पानी के लिए रोती-चिल्लाती रही थीं। जूली ने जो तस्वीरें जारी की हैं, वे बताती हैं कि हमारे कुछ वृद्धों के साथ कितना बुरा बर्ताव होता है। इस बात का कोई महत्व नहीं है कि किसकी गलती थी। सीधी-सी बात है कि डॉसन की तरह आखिरी दिन किसी को न बिताना पड़े। अस्पतालों में बुजुर्गों के इलाज के प्रति जो रवैया है, उसे बदलना जरूरी है।

डेली मिरर, लंदन

मंडियों में हेराफेरी

राजधानी दिल्ली की सब्जी मंडियों में सब्जी तौलने में गंभीर हेराफेरी होती है। ज्यादातर दुकानदार मानक बाटों का इस्तेमाल नहीं करते। नतीजा बताने की जरूरत नहीं। आप ओखला मंडी से कोई भी सब्जी पांच किलो लेकर बाहर तुलवाइए। वह मुश्किल से साढ़े तीन-चार किलो ही बैठेगी। नाप-तौल विभाग व दिल्ली सरकार को ऐसे कारोबारियों के खिलाफ सख्त से सख्त कार्रवाई करनी चाहिए।

सुनीता मोगा, दिल्ली

उपाधियों के आगे खड़े सवाल

व्यक्ति को उसकी योग्यतानुसार सही कार्य मिल जाए, आज के दौर में यह एक बड़ा जटिल कार्य है। कारण स्पष्ट है कि तकनीकी शिक्षा और किताबी शिक्षा व्यावहारिक जरूरतों से कोसों दूर हो गई है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में बांटी जा रही डिग्रियां अपने अर्थ खोने लगी हैं, यदि ऐसा न होता, तो पीएचडी की उपाधि लेने वाले स्वीपर की नौकरी के लिए हाथ-पांव न मारते। हमारी शिक्षा प्रणाली की यह विडंबना ही है कि युवकों को उनकी पात्रता के अनुसार कार्य नहीं मिल पा रहा है। ऐसी स्थिति में अरुचिकर कार्य के प्रति युवाओं का कितना समर्पण होगा, यह किसी से छिपा नहीं है। सो आवश्यकता यही है कि अर्थहीन होती शिक्षा को अर्थपूर्ण बनाया जाए, ताकि सुपात्रों के साथ न्याय हो सके।

सुधाकर आशावादी, शास्त्री भवन, ब्रह्मपुरी, मेरठ, उत्तर प्रदेश

यात्रियों से ठगी

डीटीसी के अधिकारी यात्रियों को आधुनिकतम सुविधा मुहैया कराने का लाख दावा करें, लेकिन यात्री आज भी डीटीसी बस कंडक्टरों की ठगी का शिकार बन रहे हैं। ब्लू लाइन बंद होने से जहां यात्रियों को कई रूटों पर परेशानी का सामना करना पड़ रहा है, वहीं ये कंडक्टर फुटकर न होने का बहाना बनाकर यात्रियों को उनका बाकी एक रुपया स्टॉप आने तक लौटाने का वायदा करते हैं और फिर वह रुपया वापस नहीं करते हैं। समयाभाव के कारण मजबूर यात्रियों को अपना बाकी रुपया वापस लिए बिना अपने स्टॉप पर उतरना पड़ता है। आम आदमी के लिए एक रुपया भी बहुत महत्व रखता है। इसलिए डीटीसी अधिकारियों को इस समस्या का ठोस हल ढूंढ़ना चाहिए।

नितेश कुमार राय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

बेमतलब प्रकोष्ठ

दिल्ली सरकार द्वारा मुख्यमंत्री कार्यालय में एक शिकायत प्रकोष्ठ गठित है, जहां से जनता से प्राप्त शिकायतों को संबंधित विभागों को आवश्यक कार्रवाई के लिए भेज दिया जाता है। मगर सच्चाई यह है कि संबंधित विभाग उन शिकायती पत्रों पर कार्रवाई तो नहीं ही करते, पत्र की पावती की सूचना देना भी उचित नहीं समझते। चाहे वह दिल्ली जल बोर्ड हो या फिर नगर निगम। दिल्ली परिवहन निगम हो या फिर डीडीए। अधिकारी एक-दूसरे अधिकारी को फोन देकर इतिश्री समझ लेते हैं। फिर कैसे समस्या दूर हो? क्या मुख्यमंत्री कार्यालय इस ओर ध्यान देगा?

सत्यपाल शर्मा, शालीमार बाग, दिल्ली

स्विट्जरलैंड से सीखिए

आजकल स्विस बैंकों में जमा काले धन की चर्चा जोरों पर है। कितना है, किसका है, कैसे गया, कैसे वापस लाया जाए आदि मुद्दों पर सरकार व देशवासी मेंटल जिम्नास्टिक में जुटे हैं। स्विट्जरलैंड में आखिर क्या विशेषता है, जो दुनिया के लोग वहां पैसा जमा करते हैं, यह एक प्रश्न है। लगभग तीस साल पहले अखबार में स्विट्जरलैंड के बारे में 'एक आदर्श राष्ट्रपति' शीर्षक का एक लेख पढ़ा, जो इतना अच्छा लगा कि उसकी कटिंग मैंने आज तक संभाल कर रखी है और कभी-कभी प्रसंगवश लोगों को दिखाता हूं कि देखो दुनिया में एक प्रजातंत्र ऐसा भी है। लेखक वी चमन लाल अपनी किताब 'स्विट्जरलैंड शोज द वे' के नए एडीशन के लिए सामग्री एकत्रित करने स्विट्जरलैंड गए थे। वहां बर्न में राष्ट्रपति ऑफिस के एक अधिकारी से बात करके जो जानकारी ली, उसे प्रश्न-उत्तर के रूप में उन्होंने इस लेख में लिखा। उस लेख से मालूम हुआ कि स्विट्जरलैंड दुनिया में एक तटस्थ देश है और वह संयुक्त राष्ट्र का सदस्य भी नहीं है। वहां का राष्ट्रपति सामान्य लोगों की तरह किराये के फ्लैट में रहता है। घर से ऑफिस वह पैदल या बस में जाता है। बस में भीड़ होने पर खड़े होकर ही सफर तय करता है। उसके साथ वर्दी या सादा कपड़ों में कोई सुरक्षाकर्मी नहीं होता। उसकी प्रसिद्धि ही उसकी सुरक्षा है और किसी को उससे मिलने की मनाही नहीं होती। घर में वह एक नौकर अफोर्ड नहीं कर सकता। हां, उसकी पत्नी की सहायता के लिए एक पार्ट टाइम मेड जरूर आती है। ऐसा देश, जिसमें राष्ट्रपति और सामान्य नागरिक की जीवनशैली एक समान हो, उस देश की नैतिकता और ईमानदारी उच्चतम स्तर की होगी। हम तो अपने देश में ऐसे प्रजातंत्र की कल्पना भी नहीं कर सकते।

सोमदत्त शर्मा, सराय रोहिल्ला, न्यू रोहतक रोड, नई दिल्ली

महंगाई का आलम

रोज नए झमेले
बेरंग लगते हैं मेले
क्या खा लें?
क्या ले लें?
ठंडे चूल्हे पर
खाली चकला-बेलन बेलें!

वीरेन कल्याणी
विश्वास नगर, शाहदरा, नई दिल्ली

आज का एस एम एस

टू-जी मनोरंजन

शिकायत है कि विश्व कप क्रिकेट मैचों में ज्यादा दर्शक नहीं पहुंच रहे। शायद उन्हें 2-जी घोटाला ज्यादा दिलचस्प लग रहा है।

कुमार प्रदीप

साधारण डाक से पत्र भेजने के अलावा आप ईमेल और एसएमएस से भी अपनी राय भेज सकते हैं। एसएमएस से पत्र भेजने के लिए संदेश की जगह लिखें speed-post इसके बाद थोड़ी-सी खाली जगह छोड़कर अपनी बात लिखें और 54242 पर एसएमएस करें। साथ में अपना नाम जरूर लिखें। ईमेल से 'आपकी राय' भेजने के लिए हमारा पता है- hindustanspeedpost@gmail.com

महिलाओं को क्या देता है बजट

भूमिका झंब

सरकार को एक तरफ जेंडर बजटिंग की प्रणाली में सुधार करने का प्रयास करना चाहिए, वहीं केंद्रीय बजट को महिलाओं के लिए ज्यादा संवेदनशील बनाने के पर्याप्त और ठोस प्रयास करने चाहिए।

लैंगिक असंतुलन को पहचानते हुए सरकार ने पहली बार वित्त वर्ष 2005-06 में जेंडर के आधार पर बजटीय आबंटन की शुरुआत की थी। तब से यह सातवां वर्ष होगा, जब वार्षिक बजट के साथ-साथ लैंगिक बजट संबंधी ब्यौरे लोकसभा में पेश किए जाएंगे। पिछले चार वर्षों के केंद्रीय बजट के विश्लेषण से दो बातें पता चलती हैं। पहली बात तो यही कि हमारी आबादी में आधी हिस्सेदारी रखने वाली महिलाओं को लक्षित करके जो आबंटन किया जाता रहा है, वह इतना अपर्याप्त है कि उसे प्रति व्यक्ति बजटीय व्यय की कसौटी पर कसें, तो वह महज 1,200 रुपये सालाना बैठता है और दूसरी बात यह कि इस आबंटन का भी बड़ा हिस्सा स्वास्थ्य व शिक्षा जैसे मानव संसाधन विकास से जुड़े विभागों की बुनियादी योजनाएं सोख लेती हैं। स्त्रियों की राजनीतिक सहभागिता को आगे बढ़ाने के लिए तो बजट के प्रावधानों में कुछ बचता ही नहीं।

पितृ सत्तात्मक व्यवस्था के कारण हमारे समाज में महिलाओं को कई तरह की लिंग आधारित असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। अतः जब तक बजटीय नीति-निर्धारण और उनके अमल को लेकर विशेष कदम नहीं उठाए जाते, तब तक पुरुषों के मुकाबले स्त्रियों को बजट का कमतर लाभ ही मिलेगा। इसी तर्क की बुनियाद पर तो 'जेंडर बजटिंग' की शुरुआत हुई है। बहरहाल, व्यय संबंधी ब्यौरे के भाग-ए में उन योजनाओं को शामिल किया जाता है, जिनमें खर्च होने वाली शत-प्रतिशत राशि महिलाओं व लड़कियों से बाबस्ता हो, जबकि भाग-बी में उन्हें रखा जाता है, जिनकी 30 फीसदी धनराशि स्त्रियों व बच्चियों पर खर्च की जाने वाली हो।

वित्त वर्ष 2007-08 में कुल बजटीय खर्च का तीन प्रतिशत (संशोधित आकलन) हिस्सा महिलाओं के लिए आबंटित किया गया था, जो 2010-11 में बढ़ते हुए 6.1 फीसदी (बजटीय आकलन) तक पहुंचा। हम अपने देश में महिलाओं के पिछड़ेपन को देखें, तो साफ हो जाता है कि कुल बजटीय खर्च की यह 6.1 प्रतिशत मात्रा बहुत ही कम है। अगर हम महिलाओं को आबंटित किए जाने वाले तमाम संसाधनों की गहराई से पड़ताल करें, तो यह भी साफ हो जाएगा कि आधे संसाधन तो स्वास्थ्य व शिक्षा के मद में ही खर्च हो जाते हैं, जबकि आर्थिक तंगी और विपत्तिग्रस्त महिलाओं की सहायता से संबंधित कार्य व स्त्रियों की राजनीतिक सहभागिता जैसे अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र हमारे हर बजट में उपेक्षित ही रह जाते हैं। सच्चाई यह है कि महिलाओं के हित में वर्ष 2005 में घरेलू हिंसा विरोधी कानून बनाए जाने के बावजूद केंद्र सरकार ने आज तक इस कानून के सार्थक क्रियान्वयन के लिए एक धेला भी आबंटित नहीं किया है। जरा इस तथ्य पर भी गौर कीजिए। पिछले तीन वर्षों से सरकार महिला-केंद्रित कार्यक्रमों की संख्या बढ़ाने में पूरी तरह से नाकाम रही है। इन कार्यक्रमों की संख्या आज भी 33 ही है। इतना ही नहीं, त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम और पूर्ण स्वच्छता अभियान जैसे महत्वपूर्ण कार्यक्रमों को अब सरकारी संरक्षण भी नहीं मिल रहा। इसके अलावा, ऐसा कोई संकेत भी नहीं है कि इस वक्त जिन कार्यक्रमों को सरकारी सहायता हासिल है, उन्हें कोई आर्थिक इमदाद मिलेगी भी या नहीं।

जेंडर आधारित बजट ब्यौरों की तैयारी भले ही अपने आप में काफी महत्वपूर्ण हो, फिर भी इसे बजट को लैंगिक रूप से संवेदनशील बनाने की दिशा में पहला कदम ही कहा जाएगा। हालांकि केंद्र सरकार की कई योजनाएं आम बजट में शामिल की जाती रही हैं, लेकिन उनमें से चंद योजनाएं ही अपने देश में महिलाओं की अलाभकारी स्थिति को ध्यान में रखते हुए तैयार की गई होती हैं। इसलिए देश के तमाम कार्यक्रमों व योजनाओं को इस तरह बनाया जाना चाहिए कि वे ज्यादा से ज्यादा महिलाओं के प्रति संवेदनशील हों। इसके लिए उन कार्यक्रमों के उद्देश्यों, क्रियान्वयन संबंधी दिशा-निर्देशों, वित्तीय कसौटियों को स्त्रियों के अनुकूल बनाना होगा।

एक सच्चाई यह भी है कि केंद्र सरकार के कई महकमों, जैसे वाणिज्य तथा उद्योग, राष्ट्रीय राजमार्ग तथा सड़क परिवहन, संचार व सूचना प्रौद्योगिकी, ऊर्जा, वन व पर्यावरण विभागों के तहत सक्रिय विभिन्न क्षेत्रों के दावों को अलग-अलग आंकना मुश्किल है, क्योंकि वे एक तरह से 'अविभाज्य' हैं। हमारे कुछ नीति-निर्धारकों द्वारा लगातार ऐसा ही दावा किया जाता रहा है। इसका सीधा-सा मतलब यह है कि इन क्षेत्रों के तहत चलने वाले कार्यक्रमों के लाभान्वितों की सही-सही गिनती सरकार कर ही नहीं सकती। उनमें से कई क्षेत्रों के लिए महिला कल्याण के लिए आबंटित राशि और सुविधाओं के संदर्भ में रिपोर्ट तैयार करना भी मुश्किल होता है। इसलिए यह बहुत जरूरी है कि ऐसे तमाम 'अविभाज्य' विभागों में महिलाओं पर केंद्रित नई नीतियां लागू की जाएं।

वास्तव में, केरल देश का पहला राज्य है, जिसने इस दिशा में पहले ही कदम उठा लिए हैं और वहां लैंगिक बजट को लागू हुए अब एक वर्ष से भी ऊपर होने को है। उदाहरण के लिए, केरल ने इन कथित 'अविभाज्य' विभागों के तहत आने वाले बुनियादी क्षेत्रों को महिला सहायक बनाने की शुरुआत की है। इसका नतीजा वहां साफ-साफ देखने को मिल रहा है। राज्य में महिला-केंद्रित विभागों की संख्या वित्त वर्ष 2009-10 में जहां 10 थी, वह 2010-11 में बढ़कर 17 हो गई है। इसलिए केंद्र सरकार को जहां एक तरफ लैंगिक बजट तैयार करने की प्रणाली में सुधार करने का प्रयास करना चाहिए, वहीं केंद्रीय बजट को लैंगिक रूप से ज्यादा से ज्यादा संवेदनशील बनाने के लिए उसे पर्याप्त और ठोस कदम उठाने की जरूरत है।

लेखिका सेंटर फॉर बजट ऐंड गवर्नेंस एकाउंटेबिलिटी में अधिकारी हैं

यशवंत

घोटाला और जनकल्याण

नक्कारखाना

मुझे आशंका है कि हो सकता है कि गरीबी की रेखा के नीचे आने वाले लोग सब जेल भिजवा दिए जाएं। यह विवाद का विषय है कि जेल के बाहर गरीबी की रेखा के नीचे रहना अच्छा है या जेल के अंदर गरीबी की रेखा के नीचे रहना बेहतर है।

टीवी पत्रकारों से बातचीत में प्रधानमंत्री ने कहा कि दरअसल 2-जी स्पेक्ट्रम आवंटन में सरकार को घाटा हुआ या नहीं, यह अपने-अपने नजरिए का फर्क है। जैसे लोग यह कह सकते हैं कि नरेगा में या सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सरकार को घाटा हो रहा है, वैसे ही कुछ लोग कह रहे हैं कि 2-जी स्पेक्ट्रम में घाटा हुआ है। इसका निष्कर्ष यह है कि प्रधानमंत्री की नजर में 2-जी घोटाला और नरेगा एक जैसी घटनाएं हैं। अब जिस तर्क के लिहाज से अगर 2-जी घोटाले में ए राजा को जेल हो सकती है, उसी तर्क से नरेगा में रोजगार पाने वाले भी जेल जा सकते हैं। या तो हम मानें कि नरेगा में या खाद्य सुरक्षा कानून के तहत जैसे गरीबों को सब्सिडी दी गई, वैसे ही 2-जी स्पेक्ट्रम घोटाले में भी ए राजा, कुछ अफसरों, कुछ दलालों और कुछ कंपनियों को सब्सिडी दी गई या हम मानें कि दोनों ही घोटाले हैं। अगर हम पहला तर्क मानते हैं तो राजा और उनके साथियों को जेल से छूट जाना चाहिए और अगर दूसरा तर्क मानते हैं, तो देश के सारे गरीबों को जेल में डाल देना चाहिए।

अर्थशास्त्री होने के नाते प्रधानमंत्री पहला विकल्प पसंद करेंगे। इससे राजा भी बाहर होंगे और उद्योगपति भी खुश होंगे। दूसरे विकल्प में सरकार का खर्च बढ़ जाएगा। सो प्रधानमंत्री चाहते हैं कि 2-जी स्पेक्ट्रम घोटाले को कल्याणकारी योजना मान लिया जाए घोटाला नहीं। इससे समस्या हल हो जाएगी।

राजेन्द्र धोड़पकर

कल्पना के आगे

मनसा वाचा कर्मणा

किसी भी प्रोजेक्ट में लगने से पहले वह कल्पना की पूरी उड़ान उड़ लेते थे। उन्हें सिखाया-पढ़ाया ही इस तरह गया था कि अपने लक्ष्य की कल्पना कर लेनी चाहिए। उससे आगे का रास्ता आसान हो जाता है, लेकिन इधर वह अंदाज भी धोखा देने लगा था।

अपने लक्ष्य की कल्पना करना अच्छा है। उससे एक तरह का होमवर्क तो हम कर ही लेते हैं। कभी-कभी वह सही रास्ते पर भी ले जाता है। हमारी राह को आसान भी कर देता है, लेकिन सिर्फ उसी कल्पना से काम नहीं चलता। डॉ. शेली टेलर का मानना है कि हमें कल्पना करने के अलावा उन कदमों पर सोचना चाहिए, जिनसे हम उस लक्ष्य तक पहुंचेंगे। वे कदम कल्पना से ज्यादा अहमियत रखते हैं। वह लॉस ऐंजलिस की कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी में साइकोलॉजी की प्रोफेसर हैं। उनकी किताब 'द टेन्डिंग इन्स्टिंक्ट' खूब पढ़ी गई है। बिना आगे की सोचे हम एक कदम भी नहीं बढ़ा सकते। हम जहां भी जाते हैं, उसका मन ही मन एक खाका बना लेते हैं। सपने देखना कल्पना करना ही होता है। सपनों को हकीकत में बदलने के लिए हमें और भी बहुत कुछ करना होता है। और हमारे काम का यह हिस्सा कल्पना या सपने से कम अहम नहीं होता। यह सही है कि बड़े सपने हर कोई नहीं देख सकता। यह सच है कि सपनों को हकीकत में हर कोई नहीं बदल पाता। उसके लिए आपका कामकाजी हिस्सा बड़ी भूमिका में आ जाता है।

एक शेखचिल्ली और कामयाब शख्स का फर्क है यह। लक्ष्य की महज कल्पना करने से शेली को दिक्कत यह है कि हम मन ही मन कामयाब हो जाते हैं और अगले हिस्से पर ठीक से काम नहीं करते। असल में जरूरत लक्ष्य की कल्पना और उस तक पहुंचने वाले कदमों में तालमेल की होती है। उस तालमेल पर काम करना चाहिए।

परंपरा से जुड़े रहकर भी जमीन से बेगाने

घुमंतू बंजारे जनगणना में जगह बनाने के बावजूद मुख्यधारा में जगह नहीं बना पाए हैं।

कमेंट्री

आजादी के बाद एक बार प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू राजस्थान के दौरे पर थे, तब उन्होंने सड़क के किनारे अपनी गाड़ियों का तंबू लगाए पूरे समाज को देखा। पूछने पर उन्हें वह ऐतिहासिक घटना बताई गई, जिसके अनुसार, जब मुगलों ने चित्तौड़गढ़ के किले पर अधिकार कर लिया तो महाराणा समेत उनके योद्धाओं ने प्रण ले लिया कि वे तब तक पत्तलों में भोजन करेंगे और जमीन पर सोएंगे, जब तक कि चित्तौड़ पर वह फिर कब्जा नहीं कर लेंगे। मिथक प्रचलित है कि महाराणा की फौज में शामिल एक वर्ग ने इस प्रण को और बढ़ा लिया कि वे इस अवधि में गाड़ियों पर ही अपना जीवन-यापन करेंगे। चित्तौड़ दुर्ग पर महाराणा कभी कब्जा नहीं कर पाए और उनके ये सैनिक अपने पूरे समाज के साथ प्रण रक्षा में गाड़ियों पर आ गए। अगली पीढ़ियां भी अपने पूर्वजों की राह पर चलती रही और समाज में ये घूमते-फिरते गाड़िया लुहार रूप में स्थापित हो गए।

इसे सुनकर नेहरू ने कहा कि जब देश आजाद हो गया तब इस प्रण का क्या मतलब? उन्होंने राज्य सरकार और अपनी पार्टी से इसकी व्यवस्था करने को कहा। प्रण को पूरा करने के लिए तय हुआ कि गाड़िया लुहारों के कबीले का सरदार चित्तौड़ दुर्ग पर झंडा फहराएगा। नेहरू की उपस्थिति में सरदार ने दुर्ग पर झंडा फहराया और उसकी डोर फिर नेहरू के हाथों में थमा दी। सदियों का यह प्रण तो पूरा हो गया, लेकिन उन्हें उनके पूर्वजों की रिहायश और पेशा आज तक वापस नहीं मिल पाए। फिर कभी सरकार ने भी न केवल इन गाड़िया लुहारों को बल्कि देश भर में बिखरे ऐसे अविमुक्त घुमंतू और अर्द्धघुमंतुओं की कोई सुध नहीं ली।

अभी सात फरवरी को सुप्रीम कोर्ट ने एक याचिका पर फैसला देते हुए जनसंख्या आयोग के महापंजीयक को नोटिस जारी कर फिलहाल चल रहे जनगणना के द्वितीय चरण में अविमुक्त घुमंतू और अर्द्धघुमंतू जनजातियों की गणना का निर्देश दिया है। कोर्ट ने इस सच्चाई को स्वीकार किया कि आजादी के 64 साल बाद भी सरकारों ने इन्हें पूरी तरह से नजरंदाज किया और इनकी कोई प्रामाणिक जानकारी अब तक उपलब्ध नहीं है।

घूमंतु और अर्धघूमंतु जनजातियों (प्रचलित भाषा में बंजारों) की आबादी लगभग 15 करोड़ होने का अनुमान है। ये देश के विभिन्न हिस्सों में अलग-अलग परंपराओं और नाम से विचरण करते हैं। इन्हें आबादी में शुमार करना इतना आसान भी नहीं है। ये जनजातियां साल भर विभिन्न क्षेत्रों में घूमती रहती हैं, जिससे इनका कोई ठौर-ठिकाना नहीं बन पाता। आजादी के पहले औपनिवेशिक काल में अंग्रेजी साम्राज्य की रक्षा और उनकी सुविधाओं के लिए बने कानूनों ने इन जनजातियों को काफी नुकसान पहुंचाया था, पर आजादी के बाद की सरकारों ने उन औपनिवेशिक बंधनों को जारी रखा। ब्रिटिश काल में इस समुदाय पर नजर रखने के लिए कई कानून बनाए गए। शुरुआत 1871 में हुई जब उत्तर भारत में विचरण करनेवाली जनजातियों को अपराधी घोषित करते हुए क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट बना। इस कानून का दायरा पूरे बंगाल प्रेसीडेंसी के साथ कुछ अन्य इलाकों के जनजातियों पर 1876 में बढ़ा दिया गया। 1911 में इस कानून की जद में मद्रास प्रेसीडेंसी का इलाका भी आ गया। इसके बाद भी इनमें संशोधन होते रहे और 1924 में इसे पूरे भारत में फैले घुमंतू जातियों पर लागू कर दिया गया। इस कानून के तहत समुदाय के पुरुष सदस्यों को हर सप्ताह थानों में हाजिरी देना जरूरी था। इसके अलावा इनके इलाके में किसी तरह की वारदात होने पर बिना वारंट इनकी गिरफ्तारी का अधिकार पुलिस को था। इन जनजातियों के विचरण का क्षेत्र निश्चित कर दिया गया और बाहर पाए जाने पर भी इन्हें गिरफ्तार किया जाता था। अगस्त 1949 में क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट को समाप्त कर दिया गया, लेकिन इसकी जगह 1952 में 'हैबिचुअल ऑफेंडर्स एक्ट' बना दिया गया। नए कानून के प्रावधान लगभग पूर्ववर्ती कानून की तरह ही रखे गये।

आज देशभर में करीब 313 घुमंतू (नोमेडिक) और 198 अविमुक्त (डिनोटिफाइड) जनजातियां हैं। आज भी उन्हें अपराधी मानकर ही पुलिस कार्रवाई करती है और इनका उत्पीड़न आम बात है। अधिकांश रूप से जंगली इलाकों में विचरण और वनोपजों से अपनी जरूरतों को पूरा करनेवाले इस समुदाय पर सरकार की वन नीतियों के कारण भी बंदिशें बढ़ी हैं और इनके परंपरागत जीवन-यापन के स्रोत भी सूखते चले गए हैं। सरकार अनेक कल्याणकारी कार्यक्रम चला रही है, लेकिन इन कार्यक्रमों का कोई लाभ इन्हें नहीं मिल पाता है। कभी राज-समाज की मुख्य धारा में रहनेवाली आबादी को आज कथित सभ्य समाज के लिए बने कानून ही अवांछित बना रहे हैं।

अतुल कुमार सिंह
लेखक हिन्दुस्तान से जुड़े हैं

हिन्दुस्तान Hindustan

पंजाब में गिरफ्तारियां व सजाएं

अमृतसर, २६ फरवरी। पंजाब में सत्याग्रह का दूसरा दौर, जो कि २७ जनवरी से शुरू हुआ था, इस महीने के अंत तक खत्म हो जाएगा। पंजाब कांग्रेस द्वारा तीसरे दौर की, जो कि अगले महीने के आरंभ से शुरू हो रहा है, तैयारियां जोरों से की जा रही हैं। १५०० सत्याग्रहियों की सूची तैयार की गई है, जो कि महात्मा गांधी के पास भेज दी जाएगी। सूची में बहुत से अकाली कार्यकर्ता भी शामिल हैं। लाहौर में सत्याग्रह का दूसरा दौरा कल ला. हेमराज, लाला बिहारीशाह आदि पांच कांग्रेसजनों की गिरफ्तारी के साथ समाप्त हो गया। तीसरा दौर संभवतः अगले सप्ताह से शुरू होगा। श्री जंगी खां अहरार को सत्याग्रह के सिलसिले में २ वर्ष कड़ी कैद की सजा दी गई।

अम्बाला में जगाधरी तहसील कांग्रेस कमेटी के प्रधान चौधरी रतन सिंह को १ वर्ष कड़ी कैद सुनाई गई है।

सत्तर साल पहले, 27 फरवरी, 1941 को प्रकाशित

लघुकथा

भक्ति की बोली

चैतन्य महाप्रभु ने गंगा घाट पर एक ब्राह्मण को गीता पाठ करते देखा। श्लोक पढ़ते हुए उसका हृदय गदगद हो रहा था और उसकी आंखों से अश्रु की अविरल धारा बही जा रही थी। चैतन्य ने ध्यान दिया, तो पाया कि सभी श्लोक अशुद्ध बोले जा रहे हैं। पाठ की समाप्ति पर उन्होंने पाठ कर रहे ब्राह्मण को टोका, 'तुम तो सभी श्लोक अशुद्ध बोल रहे थे, भला ऐसे पाठ का क्या लाभ होगा?' भक्ति-रस में डूबा ब्राह्मण बोला, 'प्रभु, गीता के बोल मेरे मुख से नहीं, हृदय से निकल रहे थे। पाठ करते समय मैं यहां पर नहीं, कुरुक्षेत्र में होता हूं और भगवान श्रीकृष्ण को सम्मुख देखकर मुख से प्रसन्नतावश कुछ का कुछ निकल जाता है।' चैतन्य महाप्रभु ब्राह्मण की उदात्त भक्ति के सम्मुख नतमस्तक हो गए और फिर आगे बढ़ गए।

मुकेश जैन